धर्मनिरपेक्षीकरण एवं भारतीय समाज : एक लौकिक दृष्टिकोण

सौरभ स्नेहा
शोधार्थी, समाज शास्त्र
मगध विश्वविद्यालय, बोधगया।

भारत जैसे देश में धर्म की व्यापकता जीवन के सभी क्षेत्रों में दिखायी देती है। जबकि भारतीय संविधान इस राष्ट्र को धर्मनिरपेक्ष बनाने का उद्देश्य निर्धारित करता है। तब पर भी राष्ट्र में आए दिन धर्म के क्षेत्र में संकट होते रहते हैं।

बाबरी मस्जिद ध्वस्त कर दिया गया और उस स्थान पर राम मंदिर बनाने की पहल अदालत में चल रही है। राजनीतिक मंच पर आये दिन चुनौतियाँ दी जा रही है।

जब हिन्दु और सिख के बीच तनाव बढ़ गया तब उत्तर भारत के कई नगरों में हिंसा हुई। अभी हाल ही में साम्प्रदायिक दंगों में मुम्बई में काफी खुन–खराबा हुआ है, जातीय, क्षेत्रीय संघर्ष हुआ। इसी कारण हमारा राष्ट्र धर्म–निरपेक्ष होते हुए भी धार्मिक अंधता से बँधा हुआ है।

''यूरोप और अमेरिका और अन्य विकसित देशों में धर्मनिरपेक्षता का संबंध औद्योगिक समाज के साथ होता है। औद्योगिकरण और शहरीकरण के कारण समाज में स्तरीकरण बढ़ जाता है जिसके कारण इसमें जटिलता आ जाती है और तब ऐसे समाज में धार्मिक विश्वासों, व्यवहारों और धर्म विधियों में व्यापकता भी बढ़ ही जाती है। उद्योग के साथ शिक्षा में व्यापकता भी बढ़ ही जाती है और सबसे बड़ी बात यह है कि सम्पूर्ण यूरोप में अब राज्य और चर्च पृथम हो गए हैं। ये सभी राष्ट्र प्रजातांत्रिक और धर्म निरपेक्ष हैं।''[1]

''हमारे देश में धर्मनिरपेक्षता का कोई विकल्प नहीं है। यहाँ संस्कृतियाँ एकाधिक है। भाषाएँ कई तरह की है, जातियाँ भी हजारों की तादाद में हैं। हमारा देश बहुत एथनिसिटी का है। जब मनुष्य की जमीनी यथार्थता में एकधिकता आ जाती है तब अपने–आप और धार्मिक विधियाँ कमजोर हो जाती है।''[2]

''जहाँ कहीं भी प्रजातांत्रिक व्यवस्था होती है, वहाँ व्यक्ति प्रधान होता है और धर्म प्रधान देश में समूह प्रधान होता है। ऐसी स्थिति में धर्म–निरपेक्षता नवोदित भारत का बस मुख्य मुहावरा बन कर रह गया है।''[3]

दुर्खीम ने कहा है कि – ''अधिक स्तरीकरण का मतलब अधिक आधुनिकता और अधिक आधुनिकता यानि अधिक धर्म–निरपेक्षता।

समाज विज्ञानों में धर्मनिरपेक्षता का एक निश्चित अर्थ लिया जाता है। इसका अर्थ है निरपेक्षता या तटस्थता।

''धर्म निरपेक्षता की परिभाषा यूरोप के राजनीतिक संदर्भ में की जाती है तब वहाँ बहुत ही साफ अर्थों में कहा जाता है कि धर्म को राज्य से पृथम रखना ही धर्म–निरपेक्षता है।''[4]

पीटर वर्जर ने कहा है कि – ''जब समाज और संस्कृति को धर्म के आधिपत्य से मुक्त कर दिया गया है तो यह धर्म निरपेक्षता है।''

बर्जर की इस बात को मैक्स वेबर ने और तरह से रखा है। उनकी दृष्टि में ''धर्मनिरपेक्षता युक्तिमूलकता का एक प्रक्रिया है। इस दृष्टि में जब समाज धीरे–धीरे तार्किक बनता जाता है उसमें युक्तिमूलकता का निवेश प्रक्रिया के रूप में चलता रहता है तब यह धर्मनिरपेक्षता है। वस्तुतः वेबर के अनुसार धर्मनिरपेक्षता एक प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत धर्म, राजनीति, समाज और संस्कृति से बराबर अलग होता जाता है।

भारत की एकता और अखंडता लोगों के धार्मिक विश्वासों, मान्यताओं व कृत्यों में भी स्पष्ट रूप से दिखती है। सभी धर्म व सम्प्रदाय कुछ समान दर्शन एवं नैतिक नियमों पर आधारित है। भारतीय सामाजिक व्यवस्था अनेक अर्थों में विचित्रताओं से भरा हुआ है।

धर्म निरेक्षता की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि –

यूरोप और भारत में धर्मनिरपेक्षता का जो अर्थ लिया जाता है वह यह है कि यह एक ऐसी स्थिति है जिसमें राज्य का धर्म के साथ कोई सरोकार नहीं होता – राज्य अलग और धर्म अलग।''

''धर्म अपने विश्वासों और विधियों पर चलता रहा है और राज्य उसमें तब तक हस्तक्षेप नहीं करता जब तक कि धार्मिक गतिविधियाँ या अन्य एथनिक समूहों की गतिविधियों में हस्तक्षेप नहीं करती। यूरोप में एक लम्बी अवधि तक चर्च का राजा के उपर प्रभुत्व था। इंग्लैण्ड मे राजा हेनरी सत्पम का प्रेम एनाबोलिन नाम की एक महिला के साथ था। वह उसे बहुत चाहता था। उसके सामने चर्च ने दो विकल्प रखे – 'राज्य सिंहासन छोड़ देना या एनाबोलिन को अपनी जिंदगी में लाना। हेनरी ने दूसरा विकल्प पसन्द किया। इंग्लैण्ड के इतिहास में अनेकों घटनाएँ हैं जो बताती है कि मध्यकाल में चर्च का बहुत बड़ा प्रभुत्व राज्य पर था और फिर भी धार्मिक आन्दोलन चला। नतीजा यह हुआ कि चर्च और राज्य एक दूसरे से पृथक हो गए।''[5]

''भारत में धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा का उद्‌गम ब्रिटिशकाल की घटनाओं के साथ है। हमारे यहाँ प्राचीन और मध्यकालीन भारत में धर्म और राज्य पूरी तरह से मिले–जुले थे। राजा का धर्म प्रजा का धर्म हो जाता था। जब अशोक ने कलिंग युद्ध के बाद बौद्ध धर्म अपनाया तब उसके संपूर्ण साम्राज्य में बौद्ध धर्म की व्यापकता बढ़ गयी। जगह–जगह स्तूप बनने लगे, विहार बनने लगे और अशोक के उपदेश पत्थरों पर लिखे जाने लगे। मुगलों के आने के बाद यही सब हुआ। राज्य धर्म प्रभुत्वशाली बन गया। इतिहास का यह सबक बहुत शक्तिशाली या और तब हमने संविधान में यह प्रावधान लिया कि राज्य का धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं रहेगा। संविधान कहता है प्रत्येक नागरिक को अपने धार्मिक व्यवहार की स्वतंत्रता है और अपने धर्म प्रचार की आजादी है। कहा गया है कि राजा का कोई धर्म नहीं है।''

''यह घोषित किया गया कि राज्य के सामने सभी नागरिक समान है चाहे वे किसी भी धर्म को मानने वाला हो, जाति के हो, लिंग के हों या विचारधारा के हो। भारत के धर्मनिरपेक्षता को लौकिकता आदि के नाम से जाना जाता है।''[6]

भारत एक धर्मप्रधान देश है। इसके बावजूद भी आधुनिक काल में लोगों के जीवन में धर्म का महत्व बहुत कम रह गया है। आधुनिक भारत में संस्कृतीकरण और लौकिकीकरण दोनों प्रक्रियायें साथ–साथ विकसित हो रही है। संस्कृतिकरण का प्रभाव केवल हिन्दुओं और जनजातियों तक सीमित था जबकि लौकिकीकरण का प्रभाव पूरे देश में व्याप्त है।

आधुनिकीकरण का यह परिणाम जिससे परम्परागत अभिवृत्तियों, महत्वों और कर्मकाण्डीय व्यवहारों में आता है उसे ही श्रीनिवास ने लौकिकीकरण बताया है। लौकिकीकरण के दो लक्ष्य हैं – पहला समाज में विभिन्न समुदायों, सम्प्रदायों और उपसांस्कृतिक समूहों में विभेदीकरण को स्वीकार करते हुए पक्षपातपूर्ण दृष्टिकोण या व्यवहार नहीं करना। इस लक्षण के अनुसार भारत एक धर्मनिरपेक्ष राज्य माना जाता है। लौकिकीकरण का दूसरा लक्ष्य बुद्धिवाद और विवेकवाद है। रूढ़ियों तथा अंधविश्वासों को छोड़कर तर्कयुक्त विचार और व्यवहार रखना लौकिकीकरण की विशेषता है। लौकिकीकरण के ये गुण भारतीय समाज में बढ़ते जा रहे हैं।

लौकिकीकरण की विचारधारा यह मानती है कि लौकिकीकरण, औद्योगिक समाज और संस्कृति में आधुनिकीकरण की एक अपिरहार्य विशेषता है। अतः आधुनिक विज्ञान ने पारम्परिक विश्वासों की महत्ता को घटा दिया है, साथ ही जीवन जगतों के बहुवादीकरण ने धार्मिक प्रतीकों के एकाधिकार पर आघात किया है। नगरीकरण की प्रवृति ने व्यक्तिवादी और मानक शून्यतावादी जगत को जन्म दिया है। पारिवारिक जीवन के विच्छेदन ने धार्मिक संस्थानों को कर्म सार्थक बनाया है। प्राद्यौगिकी ने परंपरा पर नियंत्रण कर ईश्वर की सर्वव्यापकता के विचार को कमजोर कर दिया है। मैक्स वेबर ने कहा है कि लौकिकीकरण को समाज के विवेकीकरण के एक साथ के रूप में प्रयोग किया जा रहा है।

''एक आंदोलन के रूप में लौकिकीकरण का उद्‌भव एवं विकास उन्नीसवीं शताब्दी में ब्रिटेन में जी0जे0 होल्के के नेतृत्व में हुआ था। जिन्होंने इसे सामाजिक नैतिकता की एक प्रणाली के रूप में प्रस्थापित करने का यत्न किया। लौकिकवादी विचारक धर्म अथवा अधिप्राकृतिक शक्ति के बिना केवल तर्क, विज्ञान एवं सामाजिक संगठन के आधार पर मानव जीवन में सुधार के लिए प्रयत्नशील थे। इसके संबंध में इनकी यह मान्यता थी कि किसी भी देश की राजनीति को धर्म से स्वतंत्र होना आवश्यक है।''[7]

सामाजिक परिवर्तन की एक प्रक्रिया के रूप में लौकिकीकरण द्वारा यह धार्मिक सोच–विचार का प्रभाव घटता जाता है और उसका स्थान सामाजिक जीवन को नियमित करने का यथार्थ की व्याख्या करने वाले दूसरे तरीकों द्वारा ले लिया जाता है। औद्योगिक समाज जहाँ लौकिकीकरण

का सर्वाधिक विकास हुआ है वहाँ प्राकृतिक जगत को समझने के लिए धर्म के स्थान पर विज्ञान को प्राथमिकता दी जाती है। इसी प्रकार सामाजिक नियंत्रण के एक स्रोत एवं साधन के रूप में धर्म का स्थान राज्य की संस्थानों और वैधानिक कानूनों ने ले लिया है। इन समाजों में धार्मिक अवकाश के पर्वों की धार्मिक महत्ता दिन–प्रतिदिन घटती जा रही है। इन अवकाशों का प्रयोग अब एक व्यक्ति धार्मिक क्रिया–कलापों में न करके पारिवारिक स्वजनों के साथ मौज–मस्ती में गुजारता है। मानवीय जीवन के एक लक्ष्य के रूप में के रूप में भौतिकवाद तीव्र गति से आध्यात्मिकता का स्थान लेता जा रहा है और सामाजिक संबंध अधिकाधिक रूप में तार्किक तथा वैज्ञानिकता जैसे द्वितीय मुद्दों पर आधारित होने लगे हैं।

अतः एक ऐसा समाज जिसमें उपयोगितावादी तथा तर्क संगत मूल्यों पर अधिक बल दिया जाता है तथा जो परिवर्तन तथा नवाचारों को प्रश्रय देता है, लौकिक अथवा धर्मनिरपेक्ष समाज कहलाता है। स्वतंत्रता के बाद धर्मनिरपेक्षता को एक ऐसी दशा के रूप में स्पष्ट किया गया, जिसके अन्तर्गत संविधान और राज्य की दृष्टि में विभिन्न धर्मों को मानने वाले समुदायों के बीच किसी तरह का भेद–भाव नहीं किया जाता। आज ग्रामीण परिवार की अपेक्षा नगरीय परिवार अधिक लौकिकीकृत हुए हैं। गाँवों से अलग होकर शहर में बसने वाले एकाकी परम्परागत संयुक्त परिवार के दबाब से मुक्त होते जा रहे हैं तथा नगरों का परिवार अपनी परम्परागत मूल्यों को छोड़ता जा रहा है और परम्पराओं में भी कम रूचि लेता है। अतएव लौकिकीकरण की प्रक्रिया का एक परिणाम कर्मकाण्डों के घटते हुए महत्व और उनके संक्षिप्तीकरण की प्रवृति है।

लौकिकीकरण की प्रकृति व अवधारणा –

लौकिकीकरण एक विचारधारा है। अंग्रेजी के शब्द ‘मबनसंतप्रंजपवद’ का अर्थ साधारण तथा धर्मनिरपेक्षता से समझा जाता है। भारत में अंग्रेजी शासन के दौरान होने वाले स्वतंत्रतता आंदोलन में भी इस शब्द का प्रयोग भारत में सभी धर्मों को मानने वालों के प्रति समानता के व्यवहार करने से समझा जाता था, किन्तु स्वतंत्रता के बाद धर्मनिरपेक्षता को एक ऐसी विचारधारा के रूप में स्पष्ट किया गया जिसके अन्तर्गत संविधान और राज्य की दृष्टि में विभिन्न धर्मों के मानने वाले समुदायों के बीच किसी तरह का विभेद नहीं किया जाता।

प्रो0 एम0एन0श्रीनिवास ने ‘मबनसंतप्रंजपवद शब्द का प्रयोग इनके वैधानिक अर्थ से भिन्न रूप में किया है। इसी कारण इन्होंने अनुवाद रूप में धर्म निरपेक्षता न करके लौकिकीकरण के रूप में किया है। लौकिकीकरण के अर्थ को स्पष्ट करते हुए डॉ0 एम0एन0 श्रीनिवास ने परिभाषा दी है कि – लौकिकीकरण शब्द से यह तात्पर्य हे कि जो कुछ पहले धार्मिक माना जाता था वह अब वैसा नहीं माना जा रहा है और उसका तात्पर्य विभेदीकरण की एक प्रक्रिया से भी है जो समाज के विभिन्न पहलुओं, आर्थिक, राजनीतिक, कानूनी और नैतिक के एक–दूसरे के प्रति संबंध से अधिक पृथक होने में दिखलायी पड़ती है। “जीम जमतउ श्मबनसंतप्रंजपवद पउचसपमे जींज ूींज ूचतमअपवनेसल तमहंतकमक तमसपहपवने पद दमू बमेंपदह जव इम नबी दक पज सेव पउचसपमे चतवबमे व किपमितमदजपंजपवद ूपबी तमेनसजे पद जीम अंतपवने चमबजे व िवबपमजलए मबवदवउपबेए चवसपजपबंसए समहंस दक उवतंस इमबवउपदह पदबतमेंपदहसल कपेबतमजम पद तमसंजपवद जव मंबी वजीमतष[8]

इस प्रकार लौकिकीरण की प्रक्रिया धार्मिकता की विरोधी है। दूसरे शब्दों में ज्यों–ज्यों लौकिकीकरण बढ़ता है। त्यों–त्यों धार्मिकता कम होती है। लौकिकीकरण का एक आवश्यक तत्व बुद्धिवाद अथवा तर्कवाद है जिसमें अनेक दूसरी बातों के अतिरिक्त परम्परागत विश्वासें और विचारों की जगह आधुनिक ज्ञान को ही प्रधानता दी जाने लगती है। इसका तात्पर्य यह है कि लौकिकीकरण हमारे जीवन और विश्वासों से संबंधित परिवर्तन की एक प्रक्रिया है, जिसमें धार्मिक विश्वासों की जगह सांसारिक अथवा लौकिक दृष्टिकोण को अधिक महत्व मिलने के कारण ही श्रीनिवास ने इसे धर्मनिरपेक्षता की प्रक्रिया कहा।

अतः धर्मनिरपेक्षता को उस सामाजिक प्रक्रिया के रूप में समझा जा सकता है, जिसके द्वारा धार्मिक प्रथागत या परम्परागत व्यवहारों में धीरे–धीरे तार्किकता का समावेश होता जाता है। दूसरों शब्दों में जन–जीवन के व्यवहारों का उद्देश्य धार्मिक न होकर व्यवहारिक होता है। फलतः पहले जो वस्तु पारलौकिक समझी जाती थी। अब उसकी व्याख्या लौकिक संदर्भ में होने

लगती है। और भी स्पष्ट रूप में कहा जा सकता है, पारलौकिक, दैवीय या धार्मिक आदर्शों की मानवीय, सामाजिक, व्यवहारिक या तार्किक व्याख्या ही लौकिकीकरण है।''

निष्कर्ष –

धर्मनिरपेक्षीकरण का लौकिकीकरण की परिभाषा देना बहुत कठिन काम है, इसलिए की धर्म की अवधारणा ही एक विवादास्पद विषय है। धर्म किसे कहते हैं इस पर विद्वानों के बीच आम राय की भारी कमी है। भारतीय संदर्भ में इस अवधारणा को स्पष्ट करते हुए एम0एन0 श्रीनिवास ने बताया है कि यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत जिस चीज को पहले धार्मिक माना जाता था अब धार्मिक नहीं माना जाता है।

दूसरे शब्दों में व्यक्तियों के धार्मिक विश्वास में कमी को ही लौकिकीकरण कहा जाता है। इन्होंने कहा है कि – लौकिकीकरण की प्रक्रिया से विभेदीकरण का बोध होता है, अर्थात समाज के विभिन्न पहलुओं जैसे – आर्थिक, राजनीतिक, कानूनी और नैतिकता में अधिकाधिक अलगाव होता है। धर्म सामाजिक जीवन के विभिन्न पहलुओं में दूर होना ही लौकिकीकरण है।

धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रक्रिया पाश्चात्यीकरण की धरणा से घनिष्ठ रूप से संबंधित है। एक तरह से वह पश्चिमीकरण का ही एक अंग है, जबकि कुछ लोग उसे पश्चिमीकरण का एक परिणाम मानते हैं।

राष्ट्रवाद के उदय और स्वतंत्रता के लिए राष्ट्रीय आन्दोलनों ने धर्म निरपेक्षीकरण को बड़े पैमाने पर प्रोत्साहन प्रदान किया। विविध प्रकार की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि वाले यहाँ तक कि परस्पर विरोधी विचारधारा वाले लोग स्वतंत्रता आन्दोलन के झंडे के नीचे जमकर खड़े हुए स्वतंत्र भारत के संविधान ने इसे गणतंत्र का आदर्श स्वरूप माना। हमारे संविधान की सारभूत भावना में विभिन्न सामाजिक एवं धार्मिक हितों में सामंजस्य स्थापित करने वाली अनेक व्यवस्थाओं के पीछे मूलतः धर्म निरपेक्षीकरण की ही प्रक्रिया गतिशील है। हाँलाकि कट्टरता और पुर्नजागरण की शक्तियाँ भी सक्रिय रही है तो धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रक्रिया की जड़े निरंतर गहराई प्राप्त करती रही है।

सामाजिक जीवन में धर्म के प्रभाव घटना धर्मनिरपेक्षीकरण है दूसरे शब्दों में समाज में धार्मिकता की भावना में कमी होना ही धर्मनिरपेक्षीकरण है। समाज के विभिन्ना अंगों का संचालन धार्मिक नियम–कानूनों से न होकर लौकिक एवं औपचारिक नियम–कानूनों से होता है। धर्मनिरपेक्षीकरण के फलस्वरूप धर्म प्रभावी सामाजिक विशेषता न होकर लोगों को वैयक्तिक इच्छाओं की चीज होकर रह जाती है।

धर्म का सामाजिक जीवन में वैयक्तिक जीवन की ओर सिमटना ही लौकिकीकरण है। एक समय था जब लोग स्वयं अपनी हजामत और दाढ़ी पसंद नहीं करते थे। हजामत नाई बनाता था और नाई का स्पर्श और हजामत दोनों ही लोगों को अपवित्र करता है। विशेषकर ब्राह्मणों के बीच हजामत के बाद स्नान किए बगैर बर्तन छूना निषेध था। उस व्यक्ति पर दूसरे लोग पानी डालकर उसे पवित्र किया करते थे। आज लोग इन बातों का भूल चुके हैं। यह परिवर्तन भी धर्मनिरपेक्षीकरण का ही प्रभाव है।

स्त्रियाँ, विशेषकर विधवाएँ और वयोवृद्ध पुरूष में दूसरे लोगों की अपेक्षा अपवित्रता संबंधी नियमों का पालन करने में अधिक कट्टरता तो सबों से अधिक होती है। जब हम वर्तमान समाज को देखते हैं तो स्पष्ट होता है कि इन परम्पराओं और विश्वासों में भारी परिवर्तन आया है। पारस्परिक मूल्यों का निर्वाह करते हुए जीवन काफी मुश्किल होता है। समय और परिस्थितियों के अनुसार सामाजिक जीवन के मूल्यों तथा व्यक्तिगत मनोवृतियों में काफी परिवर्तन आया है।

– संदर्भ –

1. Baron, Salo W. - A social and religious History of the Jews, Columbia University Press, New York, 1952
2. Barth, A - Religion of India, New Delhi, 1969.
3. Baseom, William R - "The Myth- Ritmal Theory "Journal of American Folklore, LXX, 1957, 103-114
4. Andrue Tox - The man and faith, George Allen and Unwin, London, 1936
5. Argyle Michael - Religious Behaviours, Free Press Glancoe III, 1959
6ण धर्म निरपेक्षता की परिभाषा – 21 सितम्बर 2007 को पूरा लेखित अभिगमन तिथि 11 अगस्त, 2007
7. Banton, M (Ed.) - Anthropological Approaches to the study of Religion, London, 1966
8. Srinivas M.N. Social Change in Modern India, P-119

पता –

ओम साईं सदन
पासपोर्ट ऑफिस के सामने
आशियाना दीघा रोड, बेली रोड
पटना – 800014 (बिहार)